नईदुनिया

संपादकीय

कठघरे में मुंबई की सुरक्षा व्यवस्था

अभिनेता *सैफ अली खान पर जानलेवा हमले ने सभी को सकते में डाल दिया है। घर में घुस कर उन पर किया गया हमला कोई सामान्य घटना नहीं है। मुंबई में अगर इस स्तर की बड़ी हस्तियां भी सुरक्षित नहीं हैं, तो फिर आम शहरी किस तरह खुद को महफूज समझेगा? यहां कुछ नेताओं और अभिनेताओं को कुख्यात अपराधियों ने जिस तरह निशाने पर लिया है, उससे मुंबई की सुरक्षा पर सवाल उठना स्वाभाविक ही है। यह हैरत की बात है कि बांद्रा स्थित इमारत की बारहवीं मंजिल पर अभिनेता के घर में देर रात हमलावर घुसा और उन्हें बुरी तरह जख्मी कर आसानी से भाग भी गया।*

राहत की बात बस यह है कि सैफ अली खान अब खतरे से बाहर हैं। हकीकत विस्तृत जांच के बाद ही सामने आएगी, मगर इस घटना ने देश की आर्थिक राजधानी में सुरक्षा व्यवस्था को कठघरे में खड़ा किया है। बांद्रा में कई जानी-मानी और फिल्म उद्योग से जुड़ी हस्तियां रहती हैं।

बावजूद इसके वहां की सुरक्षा व्यवस्था का आलम यह है कि एक इमारत में घुस कर हमला करने के बाद आरोपी व्यक्ति भाग भी गया। कुछ समय पहले इसी इलाके में राकांपा नेता बाबा सिद्दीकी की सरेआम गोली मार कर हत्या कर दी गई थी। इस बीच सलमान खान को भी धमकियां मिलने की खबरें आईं। महाराष्ट्र के मुख्यमंत्री का यह दावा है कि मुंबई देश का सबसे सुरक्षित महानगर है। मुंबई पुलिस अपने कामकाज को वैश्विक स्तर की गुणवत्ता वाला बताती है। सवाल है कि इसके बावजूद मुंबई में मशहूर हस्तियों के सामने इस तरह के जोखिम क्यों पैदा हो रहे हैं। कोई हमलावर बेखौफ अपना काम करके कैसे निकल जाता है? सैफ अली खान पर हमले के बाद महाराष्ट्र में सियासत गरमा गई है। अगर मुंबई को एक असुरक्षित होता शहर बताया जा रहा है, तो यह बेवजह नहीं है।

इसमें कोई दो राय नहीं कि इस मुद्दे पर सियासत नहीं होनी चाहिए, लेकिन आखिर किन कारणों से मुंबई दिनोंदिन असुरक्षित होती जा रही है। सैफ अली खान पर हमला एक आम उदाहरण नहीं भी हो सकता है, लेकिन यह साफ है कि अगर मुंबई में सुरक्षा और कानून-व्यवस्था के मोर्चे पर सरकारी दावों के अनुरूप जमीनी स्तर पर भी लोग सुरक्षित महसूस नहीं करेंगे, तो सरकार से लेकर वहां की पुलिस तक की कार्यकुशलता पर सवाल उठेंगे।

आस्था से विज्ञान तक : कुंभ युवाओं के लिए

मेधा बाजपेई

कुंभ शब्द की व्युत्पत्ति जिस धातु से हुई है। उसका अर्थ है- आवृत्त करना या आच्छादित करना। ग्रहों की स्थिति का न केवल आध्यात्मिक महत्व है, बल्कि वैज्ञानिक दृष्टि से यह पृथ्वी और मानव पर पड़ने वाले प्रभावों को भी दर्शाती है. गुरु, सूर्य और चंद्रमा का विशेष संयोग पृथ्वी के चुंबकीय क्षेत्र को प्रभावित करता है. इन खगोलीय संयोगों के दौरान कुंभ में स्नान का महत्व अध्यात्म और विज्ञान का समन्वय है. पृथ्वी और अन्य ग्रहों के बीच निश्चित आकर्षण या गुरुत्वाकर्षण होता है और इसीलिए सभी ग्रह एक दूसरे पर प्रभाव डालते हैं, ये केप्लर ने भौतिकी में 17 वी शताब्दी में ग्रहों की गति के नियम दिए जबकि 'ब्रह्मा मुरारी त्रिपुरांतकारी भानु शशि भूमि सुतो बुधश्च, गुरुश्च शुक्रः शनि राहु केतवः सर्वे ग्रहा शांतिकरा भवंतु' नव ग्रह जप भारत देश में हमेशा से होता आ रहा है। वास्तव में भारतीय ऋषियों को ग्रहों, नक्षत्रों, उनकी एक-एक गति के बारे में अद्भुत ज्ञान था।भारत की ज्ञान परंपरा के लगभग सभी धार्मिक- आध्यात्मिक तत्व विज्ञान के सिद्धांतों से प्रमाणित रहे हैं। महाकुंभ उसका सबसे बड़ा उदाहरण है। महा कुम्भ मेले में युवाओं की सहभागिता इन्हीं वैज्ञानिक पहलुओं से जुड़ी हुई है। यह मेला पृथ्वी के विभिन्न ऊर्जा केंद्रों और जलवायु पर प्रभाव डालने वाले स्थानों पर आयोजित होता है, जिनमें विशेष प्रकार की सकारात्मक ऊर्जा और पृथ्वी के चुंबकीय क्षेत्र का प्रभाव पड़ता है। यह विशेष स्थान ग्रहण कर, लोगों के मानसिक और शारीरिक स्वास्थ्य को प्रभावित करते हैं। गंगा जल को 'जैविक रूप से शुद्ध' माना जाता है क्योंकि इसमें प्राकृतिक रूप में एंटी-बैक्टीरियल गुण तथा उच्च स्तर के ऐल्कलीन गुण होते हैं, जो बैक्टीरिया और अन्य हानिकारक सूक्ष्मजीवों को नष्ट करने में मदद करते हैं।

कुम्भ मेला और बाजार की शक्ति : इंडस्ट्री के अनुमानों के मुताबिक, इस महाकुंभ में 4 लाख करोड़ रुपये से भी अधिक का व्यापार हो सकता है। इससे देश की नॉमिनल और रियल जीडीपी एक प्रतिशत से भी अधिक बढ़ सकती है। महाकुंभ मेला 2025 में न केवल आध्यात्मिक जीवन को समृद्ध करने की क्षमता है, बल्कि उत्तर प्रदेश में दीर्घकालिक आर्थिक विकास को भी गति देने की क्षमता है। अपने विशाल आकार और इससे पैदा होने वाली नौकरियों के साथ, यह आयोजन एक स्थायी अर्थिक व्यवस्था की विरासत छोड़ कर जायेगा जो राज्य को वैश्विक आर्थिक केंद्र में बदल देगा।

इसी कुम्भ आयोजन में बेहतर व्यवस्था और प्रदर्शन के लिए युवाओं को एक अवसर के तौर पर देखना चाहिए टेक्नोलॉजी AI का प्रयोग और कैसे कर सकते हैं, रोबॉटिक, होलोग्राम AR,VR अलग अलग भाषाओं में चैटबॉट, ड्रोन स्टार्ट अप शुरू कर सकते है, क्राउड मैनेज करने में अपनी शक्ति का प्रयोग कर सकते हैं, और पर्यावरणीय प्रयोग और प्रयास में अपने विशिष्ट योग्यता का योगदान दे सकते हैं। और यह कार्य सतत चलता है, क्योंकि 2028 में उज्जैन कुम्भ है। हमारे युवा भारत के भाग्य विधाता है, इस महाकुंभ में अनेकों अनुभवों के रत्न लेने और अमृत स्नान के साथ शास्त्रीय संगीत, नृत्य, नाटिका और ज्ञान परंपरा पर विमर्श से युवा ओतप्रोत होंगे, आध्यात्मिक भाव में विज्ञान और अर्थ के साथ पर्यावरण, स्थापत्य पर चर्चा भी अपेक्षित है।

महा कुम्भ मेला युवाओं के लिए एक अवसर है, जहाँ वे न केवल अपनी आध्यात्मिक यात्रा पर आगे बढ़ सकते हैं, बल्कि विज्ञान और संस्कृति के विभिन्न पहलुओं को समझ सकते हैं। इस मेले में शामिल होकर वे अपने जीवन में शांति, ऊर्जा और आत्मनिर्भरता पा सकते हैं। यह आयोजन एक समय और स्थान पर मिलकर मनुष्य के भीतर की सकारात्मकता को जागृत करने का सबसे बड़ा अवसर जो उन्हें जीवन की गहरी समझ, मानसिक शांति और सामाजिक जिम्मेदारी के प्रति जागरूकता प्रदान कर सकते हैं। पंडित श्रीराम शर्मा आचार्यजी अपनी पुस्तक तीर्थ सेवन क्यों और कैसे ? में लिखते हैं कि तीर्थ यात्रा का उद्देश्य धर्म परंपरा के पुनर्जीवन का होना चाहिए। इस कुंभ में यात्रा के साथ जन जागरण का अभियान भी चलना चाहिए। यह महाकुंभ ग्रीन कुंभ होगा अतः एक पेड़ हर साधक, तीर्थयात्री, संत और अनुष्ठान कर्ता को अवश्य ही लगाना चाहिए। साथ ही सामाजिक बुराई की तिलांजलि और सत्यप्रति का संवर्धन का महा अभियान इस महा कुंभ यात्रा से प्रारंभ होना तभी एक सफल कुंभ यात्रा होगी।

कितनी विलक्षण होगी वह व्यवस्था जहाँ देश के करोड़ों लोग अपने अपने गुणों, योग्यता, मान्यताओं और शक्तियों के साथ जन्म लेकर एक ऐसे स्थान पर पहुंचते हैं जहां सभी समान हो जाते हैं, और अपनी कृतज्ञता पंचभूत प्रकृति को ज्ञापित करते हैं, मोक्ष और मुक्ति की बात करते हैं। क्योंकि जितना दिखता है, जो महसूस होता है, जीवन इन पाँच इन्द्रियों से बहुत आगे है। हमारा कार्य मन मष्तिष्क को खुला रख कर ज्ञान और अनुभव ग्रहण करना है और ईश्वर जैसा अनंत हो जाना है।यही सनातन का सार है और अब हमारे युवा भी ये जानने और समझने लगे हैं की हमारे मनीषी ,विज्ञान आधारित कर्म करते थे। उन्होंने जो अनुभूत किया वही लिखा है, की जो शाश्वत है, वही सत्य है, वही सनातन है। अमृत योग में मोक्ष और मुक्ति प्राप्त करने के लिए करोड़ों लोग प्रयाग राज में एकत्र हो रहें हैं। भारतीय संस्कृति में आंतरिक विज्ञान को जितनी गहराई से समझा गया है ऐसी समझ पृथ्वी पर किसी दूसरी संस्कृति में नहीं है। इसलिए पूरा विश्व आश्चर्य और कौतुहल से इस आयोजन की तरफ देख रहा है।

कुम्भ केवल रील बनाने के कौतुक का विषय नहीं है, ना ही किसी प्रेम में असफल प्रेमी जो देश के विख्यात संस्थान का डिग्री प्राप्त है के साधु बन जाने की विस्तार कथा है और ना ही किसी मॉडल की कुम्भ आने और जाने की यात्रा कथा है।

ये तो त्रिवेणी जहाँ गंगा, यमुना और सरस्वती योगिनी, जीवन दायिनी,और मोक्ष दायिनी है के प्रवाह के साथ संस्कृति, उपासना, परंपराओं के विज्ञान, पर्यावरणीय चिंतन के अनूठे तरीके, कल्प वास, धर्म कर्म, त्याग और सामाजिक समरसता, आर्थिक विकास और व्यापार सबके लिए जैसे गंभीर विषयों का हस्तांतरण नयी पीढ़ी को किये जाने के बारे में है। जिस पर युवा पीढ़ी जेन जी का ध्यान आकर्षित कराना आवश्यक है। युवाओं को देखना चाहिए कि कैसे कोई संतान वैचारिक मतभेद के बावजूद अपने माता-पिता को कुम्भ में ले जाती हैं और अपनी जड़ों से जुड़ कर अलौकिक अद्वितीय अनुभव करते हैं। यहां उस विचार को पुनः युवाओं को बताने की भी है की LGBT नाम से पूरे विश्व मे लैंगिक समानता का झंडा उठने के बहुत पहले से भारत देश में थर्ड जेंडर को मान्यता और सम्मान है, और अर्द्धनारीश्वर के रूप किन्नर अपना पूरा अखाड़ा लेकर कुंभ में आते रहे हैं।

अखाड़ों की अजब दुनिया के गज़ब रिवाज से भी जिसमें कोई साधू भरी ठंड में जल समाधि तपस्या करता है, तो कोई नागा साधु है, जो जीवन भर यात्रा ही करते हैं और कुंभ में ही फिर से जुटते है धर्म रक्षा के लिए, पर्यावरण संरक्षण के लिए इससे बड़े मिनिमलिस्ट और कौन है। इसे हठ कहें या त्याग पर संसार को त्याग करना भी कहां आसान है? महाकुंभ जैसी सामूहिकता की शक्ति और समागम अपने आप में अद्भुत है। यहाँ आकर संत महंत ऋषि मुनि ज्ञानी विद्वान, सामान्य मानव सब एक हो जाते है सब एक साथ त्रिवेणी में डुबकी लगाते हैं। यहाँ जातियों का भेद खत्म हो जाता है। एक विचार से जुड़ जाते हैं। यहाँ संगम में डुबकी लगाने वाला हर भारतीय, एक भारत, श्रेष्ठ भारत की अद्भुत तस्वीर प्रस्तुत करता है।

(लेखक शिक्षाविद एवं मनोवैज्ञानिक हैं)

ट्रंप काल में बढ़ेगी चीन की वैश्विक भूमिका

टी.एन. निनान

अब बहुपक्षीय कार्रवाई करने की बजाय एकतरफा अभियान को प्राथमिकता दी जाने लगी है। संयुक्त राष्ट्र और विश्व व्यापार संगठन की घटती भूमिका एवं उपयोगिता के बीच जलवायु परिवर्तन लक्ष्यों को पूरा करने के लिए निर्धारित कार्रवाइयों का सिरे न चढ़ना चिंतनीय है। भू-राजनीति सदा ही सत्ता को लेकर रही है, लेकिन अब यह नियमों से बेलगाम हुई सत्ता विस्तार में बदलने लगी है। यह बात दक्षिण चीन सागर, गाजा का नरसंहार, तिब्बत में ब्रह्मपुत्र के ऊपर एक विशाल नया बांध और तीसरी दुनिया के सीधे संघर्ष से बचने वाले देशों को प्रभावित करने वाले आर्थिक प्रतिबंधों के मामले में एकदम सच दिखाई देती है।

अब जबकि डोनाल्ड ट्रंप एक बार फिर अमेरिका के राष्ट्रपति के रूप में पदभार ग्रहण करने जा रहे हैं, ऐसे में दुनिया मौलिक परिवर्तन के बीच फंस गई है। द्वितीय विश्व युद्ध के बाद सबसे शक्तिशाली देश भी अपनी राष्ट्रीय संप्रभुता सीमित बनाए रखने के लिए तैयार थे, जिसमें वे अधिकांशतः वैश्विक नियमों और सहकारी कार्रवाई का पालन करने के लिए सहमत थे। ऐसे नियम कई विषयों पर बनाए गए थे। केवल व्यापार और शुल्क ही नहीं, बल्कि परमाणु अस्त्र, समुद्रीय कानून और राष्ट्रीय सीमाओं की पवित्रता पर भी।

आज दो कारणों से यह बदलने लगा है। पहला है चीन का उद्भव और उसके साथ-साथ हो रहा वैश्विक शक्ति संतुलन में बदलाव। चीन कोई यथास्थितिवादी शक्ति नहीं है, इसलिए वह उलट-फेर कर चीजों को बदलना चाहता है और अमेरिका को चुनौती देने को बेकरार है। दूसरा है शक्ति-संपन्न राष्ट्रों में शासकों के रूप में अधियानक बनने पर उतारू लोगों का उदय = व्लादिमीर पुतिन, शी जिनपिंग और अब डोनाल्ड ट्रम्प।

इन दो घटनाक्रमों ने कुछ ऐसा फिर से जिंदा कर दिया है जो द्वितीय विश्व युद्ध के बाद लगभग मर चुका था, यानी महाशक्तियों द्वारा किए गए युद्ध, जिनका उद्देश्य नया इलाका हासिल करना है। इराक पर अमेरिकी युद्ध एक तरह से पूर्व-चेतावनी थी। तीन साल पहले पुतिन ने यूक्रेन पर चढ़ाई कर दी। ऐसा लगता है कि शी जिनपिंग ताइवान पर चीनी हमले की तैयारी कर रहे हैं। अब ट्रंप पनामा नहर और ग्रीनलैंड को हासिल करने के लिए बल प्रयोग की धमकी दे रहे हैं। अब बहुपक्षीय कार्रवाई करने की बजाय एकतरफा अभियान को प्राथमिकता दी जाने लगी है। संयुक्त राष्ट्र और विश्व व्यापार संगठन की घटती भूमिका एवं उपयोगिता के बीच जलवायु परिवर्तन लक्ष्यों को पूरा करने के लिए निर्धारित कार्रवाइयों का सिरे न चढ़ना चिंतनीय है। भू-राजनीति सदा ही सत्ता को लेकर रही है, लेकिन अब यह नियमों से बेलगाम हुई सत्ता विस्तार में बदलने लगी है। यह बात दक्षिण चीन सागर, गाजा का नरसंहार, तिब्बत में ब्रह्मपुत्र के ऊपर एक विशाल नया बांध और तीसरी दुनिया के सीधे संघर्ष से बचने वाले देशों को प्रभावित करने वाले आर्थिक प्रतिबंधों के मामले में एकदम सच दिखाई देती है। इस सबके मूल में मानसिकता में आया बदलाव है, जो परस्पर निर्भरता और व्यापारिक नेटवर्क को लाभप्रद रूप में न देखकर इन्हें कमजोरी के तौर पर लेती है। इसलिए हम आधी सदी से भी ज़्यादा पुरानी व्यापार उदारीकरण की परंपरा से परे हटते दिख रहे हैं। इसके लिए, वैश्वीकरण गया भाड़ में, 'सबसे पहले मेरे देश का हित' वाली नीति अपनाना है। नेटवर्क वाली अर्थव्यवस्था छोड़ दो, आत्मनिर्भरता अपनाओ। मंडी के फायदे से बाहर निकलो, राष्ट्रीय व्यापारिक सुरक्षा पहले। कोई एक सदी पहले, जब इस सूत्र को आजमाया गया था, तो यह तरीका कारगर साबित नहीं हुआ था, लेकिन लगता नहीं कि इतिहास से मिले सबक बहुत ज़्यादा देर तक असरदार रहे। शायद सबसे महत्वपूर्ण बदलाव यह है कि अतीत में नियम-निर्माण का बहुत बड़ा स्रोत यानी संयुक्त राज्य अमेरिका, अब धरती का सबसे अविश्वसनीय देश बन गया है। फाइनेंशियल टाइम्स के एक स्तंभकार ने अपने लेख में पूछा है : 'क्या अमेरिका एक बेलगाम देश बन गया है'। कोई नहीं जानता कि यह आगे क्या करने जा रहा है, और तो और इसके सहयोगी भी नहीं। यह सब दुनिया को कहीं ज़्यादा अशांत जगह बनाएगा, जहां पहले से बहुत सी अनिश्चितताएं और जोखिम व्याप्त हैं। द्वितीय विश्व युद्ध के बाद से जो सहकारी एजेंडे बनाए गए थे, वे पश्चिमी प्रतिमान की प्रधानता के कारण संभव हुए थे। ये कानून एवं समझौते पहले से मौजूद सत्ता संरचनाओं को दर्शाते थे और जिन्हें युद्ध से उभरे सबसे शक्तिशाली देश द्वारा लागू किया गया थे। अगर यह विश्व व्यवस्था, जैसा कि बताया जा रहा है, यदि अब टूट रही है, तो हमें मूल कारण पर वापस जाना होगा: चीन के उदय से पश्चिम के लिए बनता खतरा, एक अभूतपूर्व गति और पैमाने पर। पश्चिमी प्रतिक्रिया-इस धारणा से प्रेरित है कि चीन ने स्वीकृत व्यापार नियमों का पालन नहीं किया, पश्चिम के औद्योगिकीकरण को नुकसान पहुंचाने के लिए व्यवस्थित रूप से काम किया। पश्चिमी प्रौद्योगिकियों को भी चुराया है- लिहाजा उस पर व्यापार प्रतिबंध, बढ़ाया टैरिफ, प्रौद्योगिकी तकनीक देने से इनकार इत्यादि अनेक अन्य उपाय किए जाएं। लेकिन शायद यह करने में बहुत देर कर दी। चीन की औद्योगिक श्रेष्ठता को कोई चुनौती नहीं दे पाएगा। पिछले साल इसने अमेरिका से 12.6 गुणा अधिक स्टील, 22 गुणा अधिक सीमेंट और तीन गुणा अधिक कारें बनाईं- जिनके इलेक्ट्रिक मॉडलों के साथ यह अब कार बाजार में जापानी और जर्मनी के वर्चस्व को पछाड़ने की हैसियत में आ चुका है। सकल वैश्विक जलपोत उत्पादन में चीनी शिपयार्ड का हिस्सा आधे से अधिक है। 2030 तक, चीन का विनिर्माण क्षेत्र समूची पश्चिमी दुनिया के कुल उत्पादन से अधिक होने का अनुमान है। ये शक्तियां केवल तभी तक उपयोगी हैं यदि चीन अपनी पहुंच विश्व बाजारों तक जारी रख पाए, जिसे घटाने की उत्तरोत्तर कोशिशें की जा रही हैं। फिर भी चीन ने 2024 में रिकॉर्ड व्यापार अधिशेष का आनंद लिया, और ट्रिलियन डॉलर अर्थव्यवस्था बनने के कगार पर है। कुछ क्षेत्रों में यह तकनीक के मामले में पश्चिमी मुल्कों से आगे निकल गया है। लेकिन अब चीनी अर्थव्यवस्था को गंभीर ढांचागत समस्याओं का सामना करना पड़ रहा है। वास्तविकता जिससे निपटा जाना चाहिए वह यह है कि पश्चिम मुल्क जितना अधिक खतरा महसूस कर रहे हैं, उतनी ही जल्दी वे अपने उन नियमों को तज रहे हैं जिनका इस्तेमाल कर उन्होंने कभी खेल किया था। नई दुनिया में, हर देश अपने हित पर केंद्रित है, और इसके लिए शक्ति प्रयोग जायज मानता है। हकीकत है कि हर देश अपना रक्षा बजट बढ़ा रहा है, हम उम्मीद करें कि इससे संघर्ष न बढ़े। भले ही इसे टाला जा सकता है, लेकिन पुरानी दुनिया वापस नहीं आएगी। लेकिन क्या नई दुनिया नए नियमों के लिए सहमत हो सकती है? जिस प्रकार चीज़ें चल रही हैं, इससे पहले कि मुल्क वार्ता के लिए राज़ी हों, वैश्विक शक्ति धुरी में बदलाव के लिए खेल होकर रहेगा- तब जाकर, महाशक्तियां आक्रामकता या आक्रामक मुद्रा के माध्यम से अपनी-अपनी हदों की आजमाइश करेंगी। एक नया तरीका निकलकर आ सकता है।

आजकल

क्या कठोर कदम से रुक जाएंगे हादसे?

सड़क दुर्घटनाओं पर काबू न पाए जा सकने को लेकर केंद्रीय सड़क परिवहन एवं राजमार्ग मंत्री की चिंता वाजिब है। इसके लिए वे खराब सड़क निर्माण को जिम्मेदार मानते हैं। संसद में भी उन्होंने कहा था कि विदेश में जब भी भारत में सड़क दुर्घटनाओं और सड़कों के निर्माण को लेकर बात होती है, तो उन्हें शर्म से मुंह छिपाना पड़ता है। अभी भारतीय उद्योग परिसंघ की तरफ से आयोजित एक कार्यक्रम में उन्होंने कहा कि सड़क दुर्घटनाओं के मामले में भारत दुनिया में पहले स्थान पर है। इसका बड़ा कारण सड़कों का खराब ढंग से निर्माण किया जाना है।

उन्होंने कहा कि खराब सड़क निर्माण को गैर-जमानती अपराध बना दिया जाना चाहिए। सड़क निर्माण के ठेकेदारों और इंजीनियरों को इसके लिए जिम्मेदार ठहराया जाना चाहिए। निस्संदेह यह सुझाव कठोर लग सकता है। मगर चूंकि सड़क परिवहन एवं राजमार्ग मंत्रालय ने संकल्प लिया है कि वह 2030 तक सड़क दुर्घटनाओं में होने वाली मौतों को घटा कर आधा कर देगा, बिना ऐसे कठोर कदम उठाए उसका लक्ष्य तक पहुंचना आसान नहीं होगा। मंत्रालय के अनुसार 2023 में पांच लाख सड़क दुर्घटनाएं हुईं, जिनमें से एक लाख बहत्तर हजार लोगों की मौत हो गई। इनमें से एक लाख चौदह हजार लोगों की उम्र अठारह से पैंतालीस वर्ष के बीच थी। सड़क दुर्घटनाओं पर काबू पाने के लिए कई उपाय आजमाए जा चुके हैं। यातायात नियमों के उल्लंघन पर भारी जुर्माने का प्रावधान किया गया। जगह-जगह सीसीटीवी कैमरे लगाए गए। मगर इसका कोई उल्लेखनीय असर नजर नहीं आया। सड़क दुर्घटनाएं हर वर्ष कुछ बढ़ी हुई ही दर्ज होती हैं। सड़क दुर्घटनाओं में मौत का सबसे बड़ा कारण सड़कों का खराब ढंग से निर्माण चिह्नित किया गया है। राजमार्गों और द्रुतगामी सड़कों पर चौड़ाई आदि में एकरूपता और मोड़ों पर उचित तकनीक का इस्तेमाल न होने के कारण दुर्घटनाएं और मौतें अधिक होती हैं। अच्छी बात है कि परिवहन मंत्री ने इस बात की पहचान की और इसे स्वीकार भी किया। सड़कों पर जिन वजहों से दुर्घटनाएं और मौतें होती हैं, उन्हें दूर करने के लिए भारी रकम भी आबंटित की गई है। परिवहन मंत्री ने माना है कि खराब निर्माण सामग्री के इस्तेमाल और अव्यावहारिक डिजाइन की वजह से सड़क दुर्घटनाएं होती हैं। उनकी चिंता वाजिब है, लेकिन इसके लिए जिम्मेदारी तय करने की जवाबदेही किसकी है।

बीते जमाने की बात होती सोशियोट्रॉपी

डॉ. राजेन्द्र प्रसाद शर्मा

सामाजिक ताने-बाने में बदलाव को इस तरह से आसानी से समझा जा सकता है कि सोशियोट्रॉपी आज बीते जमाने की बात होती जा रही है। कोरोना के बाद तो हालात में और भी अधिक बदलाव आया है। आज की पीढ़ी में सामाजिकता का स्थान वैयक्तिकता लेती जा रही है। एक समय था जब सामाजिकता को वैयक्तिकता के स्थान पर अधिक तरजीह दी जाती थी।

परिवार, मोहल्लों और आसपास कोई ना कोई ऐसे अवश्य मिल जाते थे जो जगत मामा तो कोई जगत काका तो कोई जगत दादा होते थे। छोटा हो या बड़ा, दादी हो या पोती, सास हो या बहू सब उन्हें प्रसिद्ध नाम से ही पुकारते थे। यह था एक तरह का अपनत्व। इस तरह के व्यक्तित्व वाले व्यक्ति सभी के चहेते होते थे तो जान-पहचान हो या ना हो, वे जरूरत के समय पहुंच जाते थे। सुख-दुख खासतौर से मुसीबत के समय ऐसे व्यक्ति आगे रहते थे। हालांकि आज इस तरह के व्यक्तित्व को ढूंढ़ना लगभग असंभव सा है।

दरअसल, हमारी परंपरा व्यष्टि का ना होकर समष्टि की रही है। बच्चों को पहले सामाजिकता का पाठ पढ़ाया जाता था। बच्चे मोहल्ले के सभी घरों को अपना ही घर मानकर चलते थे तो मोहल्ले में रहने वाले किसी का भी बच्चा हो उसे अपने बच्चे जितना ही प्यार और दुलार देते थे। दुख-दर्द में पूरा मोहल्ला साथ हो जाता था। मोहल्ले में किसी घर में मौत हो जाती थी तो पड़ोसी उस परिवार को संभालने और देखभाल की जिम्मेदारी स्वयं अपने हाथ में ले लेते थे। शादी-विवाह में काम बंट जाता था, आज तो कैटरिंग का जमाना आ गया नहीं तो सैकड़ों लोगों को परिवार और मोहल्ले के युवा ही भोजन कराने की जिम्मेदारी निभा लेते थे। हलवाई के काम शुरू करते ही मोहल्ले के लोग बारी-बारी से देखरेख व सहयोग के लिए तैयार रहते थे। आज यह सब बदल गया है। गगनचुंबी इमारतों में कई परिवार रहते हैं और हालात यहां तक हो गए हैं कि एक ही कॉम्पलेक्स या अपार्टमेंट में रहने वाले एक-दूसरे को पहचानते नहीं। ऐसे में आपसी सहयोग और मेल-मिलाप की बात करना बेमानी होगा। सोशियोट्रापी मनोविज्ञान में प्रयोग होता है। इसे सकारात्मक और नकारात्मक दोनों ही अर्थों में लिया जाता है। दूसरों को खुश रखने की खुशी में अपने खुशी को भूल जाना वाली मनोस्थिति को भी सोशियोट्रापी के रूप में देखा जाता है। यही कारण है कि इस एकांगिग अर्थ को लेने के चक्कर में सोशियोट्रोपी मानसिकता वाले लोगों के अवसादग्रस्त, तनाव पीड़ित और हमेशा चिंतित रहने की मनोदशा को साइड इफेक्ट के रूप में देखा जाता है। जबकि सोशियोट्रापी यहीं तक सीमित नहीं है। दूसरे के दुख-दर्द में भागीदार होना, आवश्यकता के समय नि:स्वार्थ सहयोग व सहायता करना, दूसरे की परेशानी को समझना और उसे दूर करने में यथासंभव सहयोग करना यह सोशियोट्रापी का ही एक रूप है। हमारी परंपरा में जो व्यक्ति केवल अपने आप के बारे में सोचता है उसे एकलखोर या स्वार्थी कहा जाता रहा है। हमारी परंपरा वसुधैव कुटुम्बकम की रही है। हमारी परंपरा में दूसरे की उन्नति देखकर प्रसन्न होने की भावना रही है। खुशी के मौके पर मिठाई बांटना खुशी में सभी को भागीदार बनाना है। इसी तरह से जरूरत के समय खड़े हो जाना जरूरतमंद के लिए संबल होता है।

देखा जाए तो बदलते सामाजिक ताना-बाना से सबकुछ बदल कर रख दिया है। एकल परिवार की संस्कृति समाज में अपना प्रभुत्व जमा चुकी है। परिवार पति-पत्नी और बच्चों तक सीमित होता जा रहा है। जो भावनात्मकता संबंधों को तरोताजा रखती थी वह भावनात्मकता कहीं खो गई है। अवकाश के दिनों का उपयोग दादा-दादी या नाना-नानी के पास गुजारने के स्थान पर कहीं घूमने में जाया होने लगा है। एक समय था जब गांव से यात्रा पर भी जाते थे तो गांव के कई परिवार के लोग उस भ्रमण दल में होते थे।

हालात तो यहां तक होने लगे हैं कि घर के बुजुर्ग सदस्य को जिसे साथ की अधिक आवश्यकता है, घर की देखभाल के लिए छोड़ना आज आम होता जा रहा है। खुशी के पल को साझा करने का तरीका भी बदल गया है। जिस तरह की प्राथमिकताएं बदली हैं वह पीपल प्लीजर के स्थान पर सेल्फ प्लेजर होती जा रही है। दरअसल सामाजिकता के जो मायने एक समय होते थे उसमें कोई क्या कहेगा महत्वपूर्ण होता था, सामाजिक प्रतिक्रिया का बड़ा भय होता था, आज हालात यह है कि मां-बाप क्या कहेंगे इसकी भी परवाह नहीं रही है। दरअसल न्यूक्लियर फैमेली के यह साइड इफैक्ट है जो लोगों को सोशियोट्रापी से दूर ले जाते हैं। पाश्चात्य देशों द्वारा अब इसकी अहमियत सामने आने लगी है। ब्रिटेन में पिछले दिनों एक अध्ययन में सामने आया है कि अब बच्चों का जब भी मौका मिलता है परिवार यानी दादा-दादी या नाना-नानी का साथ जरूरी माना जाने लगा है। क्योंकि सामाजिक ताना-बाना में बिखराव के कारण ही आज की पीढ़ी रिश्तों की अहमियत भूलती जा रही है। दादा-दादी या नाना-नानी में से एक तो पराया होता जा रहा है। जब खास रिश्तों के ही यह हालात होते जा रहे हैं, परिवार के मायने ही बदलते जा रहे हैं तो फिर अड़ोस-पड़ोस,मोहल्ले या शहर-गांव के रिश्तों की बात करना ही बेमानी होगा।